

# जनसत्ता

Date: 07-07-16

## बृहस्पति के दरवाजे पर

भारतीय मानस के लिहाज से देखें तो सबसे बड़ा होने के नाते बृहस्पति को ग्रहों का 'राजा' माना जाता है और ज्योतिष विद्या के मुताबिक इससे कई ऐसे शुभ-अशुभ जुड़े हुए हैं, जिनका हमारे जीवन पर असर पड़ता है।

अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा के मानवरहित यान जूनो के बृहस्पति की कक्षा में पहुंचने के साथ ही दुनिया के समूचे विज्ञान-जगत में खुशी का माहौल स्वाभाविक है। तमाम अनिश्चितताओं और आशंकाओं के बीच और कुछ तकनीकी बाधाओं का सामना करने के बावजूद पांच साल के सफर की यह कामयाबी केवल एक अंतरिक्ष यान के अपनी मंजिल तक सुरक्षित पहुंचने की कहानी नहीं है। इस तरह का हर अभियान सौरमंडल की उन गुत्थियों को खोलने में मददगार साबित हो रहा है, जिनके बारे में या तो मनुष्य अब तक अनजान रहा या फिर अपनी सीमाओं की वजह से उसने उन चीजों को पारलौकिक मान लिया। भारतीय मानस के लिहाज से देखें तो सबसे बड़ा होने के नाते बृहस्पति को ग्रहों का 'राजा' माना जाता है और ज्योतिष विद्या के मुताबिक इससे कई ऐसे शुभ-अशुभ जुड़े हुए हैं, जिनका हमारे जीवन पर असर पड़ता है। लेकिन सच यह है कि बृहस्पति भी एक ऐसा ग्रह है, जो सौरमंडल में पृथ्वी की तरह मौजूद है। दुनिया की दूसरी ब्रह्मांडीय गतिविधियों के बारे में कल्पनाओं के आधार पर बनी धारणाओं के बरक्स इस ओर भी ध्यान दिलाने का काम कभी खगोल विज्ञान ने किया और अब उसी की उपलब्धियों के सहारे हम बृहस्पति को बेहद करीब से जानने के मुहाने पर खड़े हैं। अब 2.7 अरब किलोमीटर का सफर तय करके बृहस्पति की कक्षा में पहुंचे जूनो के नौ उपकरणों के जरिए वहां के गुरुत्वाकर्षण, चुंबकीय क्षेत्र, वायुमंडल में पानी की मौजूदगी का पता लगाया जाएगा। सोलह सौ किलो भार का यह यान अगले लगभग बीस महानों तक इस ग्रह के सैंटीस चक्कर लगाएगा और यह जानने की कोशिश की जाएगी कि बृहस्पति का निर्माण कैसे हुआ था। यों अंतरिक्ष और उसमें मौजूद ग्रहों के बारे में जानने-समझने के लिए अनेक प्रयोग किए गए हैं, लेकिन यह पहली बार है जब इस तरह एक

यान बृहस्पति के चारों ओर घूमते हुए इसके आंतरिक भाग, रचना और चुंबकीय क्षेत्र के रहस्यों को सामने लाने की कोशिश करेगा। इसका महत्व केवल बृहस्पति तक सीमित नहीं है। चूंकि बृहस्पति का निर्माण संभवतः सूर्य के बाद सबसे पहले हुआ, इसलिए जूनो के जरिए इसका अध्ययन सौरमंडल के बाकी ग्रहों के जन्म, उनकी व्यवस्था और भूमिकाओं को समझने में मदद करेगा। किसी दौर में अंतरिक्ष की अनसुलझी गुत्थियों के बारे में कुछ पारलौकिक धारणाओं के हिसाब से ही उसकी व्याख्या भी होने लगी होगी। लेकिन विज्ञान के खोजी स्वभाव ने जब अपनी तकनीकी उपलब्धियों से उन धारणाओं को यथार्थ की पड़ताल करनी शुरू की तो अब न सिर्फ धरती से लेकर अंतरिक्ष तक के विस्तार की परतें समझ में आने लगी हैं, बल्कि इससे मनुष्य के ज्ञान और उसकी क्षमता का भी अंदाजा सामने आ रहा है। नासा ने बृहस्पति के बारे में जानने के मकसद से वहां जूनो से पहले गैलीलियो नामक अंतरिक्ष यान भेजा था। लेकिन लंबे समय तक वहां रहने के बावजूद कई तकनीकी सीमाओं की वजह से कोई बड़े महत्व की जानकारी सामने नहीं आ सकी थी। इसके बावजूद गैलीलियो की अहमियत इस रूप में है कि उसी अनुभव के आधार पर जूनो को बेहतर क्षमता से लैस किया गया। अब देखना है कि बीस महीने बाद जूनो जब बृहस्पति ग्रह के वातावरण में समा कर खत्म होगा, उससे पहले वह दुनिया को इसकी भौतिक और रासायनिक संरचना के किस पहलू से रूबरू कराता है।

राष्ट्रीय  
सहारा

Date: 07-07-16

## अनेक आयामों को साधना

प्रो. अजय दुबे

पिछले 70-80 सालों में जहां कई जगह भारत ने अफ्रीका के हितों को अपने हितों के ऊपर तरजीह दी है, जबकि चीन ने ऐसा कभी नहीं किया। इसलिए अफ्रीकी देश भारत को बहुत अच्छी दृष्टि से देखते हैं। लेकिन इन सारे प्रयासों के बावजूद उनकी एक शिकायत रहती है कि चीन और अमेरिका के राष्ट्रपति लगातार अफ्रीका के दौरे पर रहते हैं, लेकिन जो भारतीय नेतृत्व वहां नहीं जाता

अफ्रीका हमेशा से भारत के लिए एक महत्वपूर्ण क्षेत्र रहा है। अफ्रीका को भारत का समर्थन उसकी आजादी के लिए, रंगभेद के खिलाफ चल रहे आंदोलन के लिए, या उसके आर्थिक विकास के लिए हमेशा मिलता रहा है। जब 1990 के दशक में भारत अपनी आर्थिक उदारतावादी नीति में व्यस्त था, उस दशक में और उसके बाद के दशक में चीन ने अपना वर्चस्व अफ्रीका में आर्थिक निवेश के माध्यम से जमाया। बहुत सारे देशों में उसकी पहुंच और पकड़ बहुत बढ़ गई और भारत, जिसके लिए अफ्रीकी देशों के पास काफी सम्मान और दोस्ताना रिश्ता था, उसमें पीछे रह गया। भारत में जब आर्थिक विकास ने तेजी पकड़ी, उस तेज आर्थिक विकास में भारत को अफ्रीकी संसाधन की जरूरत महसूस हुई। भारत के जो भौगोलिक-राजनीतिक-सामरिक हित इस क्षेत्र में बढ़े, जहां भारत एक नियंतण ताकत के रूप में उभरना चाहता था, उसमें उसे अफ्रीका की जरूरत महसूस हुई। उदाहरण के लिए हर पांच साल में भारत के आर्थिक विकास में जो ऊर्जा की जरूरत है, वह हर पांच साल में दोगुनी हो जाती है, और उसमें भी विशेषकर जो पेट्रोलियम पदार्थों की जरूरत है, वह बेहद महत्वपूर्ण जरूरत है, विशेषकर ऊर्जा के संदर्भ में। और इसलिए अफ्रीका अभी भी एक ऐसा क्षेत्र है, जहां विदेशी पकड़ उतनी मजबूत नहीं हुई है, जितनी खाड़ी के देशों में है। वैश्वीकरण के बाद अफ्रीकी देशों के पास भी विकल्प खुले हैं कि वो दूसरों देशों के साथ अपने संबंधों को विकसित कर सकते हैं। चीन, ब्राजील, अज़ेटीना, मलेशिया, इंडोनेशिया आदि ने बाजार और ऊर्जा क्षेत्र को ध्यान में रखकर अफ्रीका में पहुंच बनाने के प्रयास किए हैं। खासकर खनिज पदार्थों के लिए। और फिर अफ्रीका के लिए विकल्प खुला। इस तरह के बहुत सारे अन्य खनिज पदार्थ जैसे पेट्रोलियम उत्पाद, गैस इत्यादि जैसे क्षेत्रों में भारत के लिए विकल्प खुले हैं। भारत को इनकी जरूरत है, क्योंकि हर पांच साल में भारत की जरूरत दोगुनी हो जाती है। इस लिहाज से ये क्षेत्र भारत के लिए अहम हैं क्योंकि चाहे वो खाड़ी देश हों, म्यांमार हो या लैटिन अमेरिकी देश हों। हर तरफ विदेशी ताकतें बेहद मजबूती से जमे हैं। यकीनन यहां घुसना भारत के लिए बेहद मुश्किल है। भारत ने 2008 में भारत-अफ्रीका सम्मेलन आयोजित किया था, और जो इसकी ऐतिहासिक सद्भावना थी। उसे आर्थिक, राजनीतिक और सामरिक रूप में रूपांतरित करने का प्रयास किया गया। भारत-अफ्रीका सम्मलेन के बाद भारत पहली बार, जिसकी छवि अभी तक मदद लेने वाले देश की रही है, मदद देने वाले देश के तौर पर उभर कर सामने आया। इसी प्रक्रिया में तीन भारत-अफ्रीका सम्मलेन, जो हर तीन साल के अंतराल (2008, 2011, और 2014 में लगातार हुए) पर होते आए हैं। उनमें भारत ने करीब 20 बिलियन अमेरिकी डॉलर का निवेश किया। यह भारत सरकार "एड इन्वेस्टमेंट सॉफ्टलाइन क्रेडिट" के रूप में अफ्रीका को उपलब्ध कराएगी। इसके अलावा, खासी संख्या में फेलोशिप, कुछ सुरक्षा समझौते-जो हिंद महासागर से संबंधित हैं-पायरेसी पर लगाम लगाने के लिए किए गए। इसके साथ ही अफ्रीकी देशों से जो हमारी मित्रता है, उसके मददेनजर वहां से ऊर्जा निर्यात के क्षेत्र में भी खासा सहयोग मिला। इन सबके अलावा भी बहुत सारे समझौतों पर सहमति बनी। चीन की अच्छी पहुंच होते हुए भी सारे अफ्रीकी देश भारत को एक लोकतांत्रिक ताकत के रूप में देखते हैं। उनके बीच भारत की छवि एक ऐसे

राष्ट्र के रूप में है, जो उपनिवेश से स्वयं पीड़ित रहा है। एक ऐसे राष्ट्र के रूप में भी भारत की छवि उनके सामने प्रस्तुत है, जो विविधतापूर्ण राष्ट्र है और जिसने खुद को एक लोकतांत्रिक देश के रूप में सफलतापूर्वक परिलक्षित किया है। और यही नहीं भारत ने एक उभरती हुई नियंत्रण शक्ति के रूप में विश्व पटल पर अपनी मौजूदगी भी दर्ज कराई है। अफ्रीकी देशों की नजर में भारत की बेहद अच्छी छवि है। भारत और चीन के बीच तुलना करें तो भारत चीन के मुकाबले बहुत कम समृद्ध है। और निकट भविष्य में वह उसके आसपास भी नहीं पहुंच सकता। इसके बावजूद चीन और अफ्रीका के दरम्यान एक बहुत ही असहज सा रिश्ता है। ऐसा जो मतलब और स्वार्थ के साथ बढ़ता है। लेकिन इसके उलट भारत ने अफ्रीका के लिए काफी कुर्बानियां दी हैं। पिछले 70-80 सालों में जहां कई जगह उसने अफ्रीका के हितों को अपने हितों के ऊपर तरजीह दी है, जबकि चीन ने ऐसा कभी नहीं किया। इसलिए अफ्रीकी देश भारत को बहुत अच्छी दृष्टि से देखते हैं। चीन के प्रभाव के बावजूद। लेकिन इन सारे प्रयासों के बावजूद उनकी निरंतर शिकायत रहती है कि चीन और अमेरिका के राष्ट्रपति लगातार अफ्रीका के दौरे पर रहते हैं, लेकिन भारतीय नेतृत्व वहां नहीं जाता। वो संबंधों को जल्दी न तो जोड़ते हैं ना उसे प्रगाढ़ बनाने की दिशा में आगे बढ़ते हैं। इस कारण, जो समझौते किसी के दौरे के दौरान होते हैं, वो कार्यान्वित नहीं हो पाते। सिर्फ अफ्रीकी राष्ट्रहित या यूं कहें कि एकतरफा दौरे/रिश्ते चलते रहते हैं। हाल के दिनों में जो दौर शुरू हुआ, वो अच्छा कदम है। मसलन पहले उप राष्ट्रपति गए। फिर राष्ट्रपति गए। अब प्रधानमंत्री जा रहे हैं। ये दौरे अफ्रीका में जो हमारे दोस्त हैं, उनसे रिश्तों में गर्मजोशी में जो कमी थी, उसे पाटने के लिहाज से बेहद अहम हैं। या जो भारत के अपने उद्देश्य चाहे वो निवेश की सुरक्षा के संबंध में हों या बाजार में पहुंच बनाने के लिहाज से, व्यापार के लिए हों या ऊर्जा सुरक्षा के लिए, चाहे भारत को सुरक्षा परिषद के लिए समर्थन के संदर्भ में हों या पर्यावरण समझौते या व्यापार वार्ता के संदर्भ में। सबसे इतर, जो दूसरे आयाम हैं, उनकी दृष्टि से राष्ट्राध्यक्ष के स्तर पर यह दौरा बेहद अहम है, विशेषकर उस दूरी को पाटने के लिहाज से जो अरसे में बनी थी। (लेखक सेंटर फॉर अफ्रीकन स्टडीज, जेएनयू में चेयरपर्सन हैं)

---

# हिन्दुस्तान

तस्वीरों को वाहिए नया नजरिया

Date: 07-07-16

## मोजांबिक की दाल

भारत और मोजांबिक के बीच एक समझौता होने जा रहा है, जिसके तहत मोजांबिक में अरहर और उड़द की दालों का उत्पादन बढ़ाया जाएगा। उस बढ़े हुए उत्पादन को बाद में भारत खरीद लेगा। भारत मोजांबिक से लगभग एक लाख टन दालें हर साल आयात करता है।

अगले पांच साल में इसे दो लाख टन तक ले जाने की योजना बनाई गई है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की मोजांबिक यात्रा के दौरान इस समझौते पर दस्तख्त किए जाएंगे। भारत की योजना मोजांबिक में एक रिवर्स स्पेशल इकोनॉमिक जोन बनाने की भी है, जिसका इस्तेमाल भारत को दालें भेजने के लिए होगा। मोजांबिक के किसान भारत के लिए दालों का उत्पादन करेंगे और भारत मोजांबिक को यह गारंटी देगा कि वह दालों की पूरी फसल खरीद लेगा। जब योजना कार्यान्वित हो जाएगी, तो भारत में दालों की कीमतों पर नियंत्रण होना संभव होगा, क्योंकि निकट भविष्य में यह संभव नहीं लगता कि घरेलू उत्पादन से भारत में दालों की जरूरत पूरी हो सके। भारत में लगभग 17 लाख टन दालें हर साल पैदा होती हैं और यह जरूरत से लगभग पांच लाख टन कम है। इस कमी को आयात से पूरा किया जाता है। पांच लाख टन बहुत बड़ी मात्रा है, इसमें अगर किसी वजह से कमी हो जाए, तो दालों के भाव तेजी से बढ़ने लगते हैं।

पूरी दुनिया में भारत ही एक ऐसा देश है, जहां प्रोटीन की जरूरत बड़ी हद तक दालों से पूरी होती है। भारतीय उप-महाद्वीप के अलावा बाकी दुनिया में दालों की खपत बहुत कम होती है, इसलिए जिन अन्य देशों में दालें उगाई जाती हैं, वे भारत को निर्यात करने के लिए ही उगाई जाती हैं। पिछले कुछ वर्षों में भारत में दालों की मांग तेजी से बढ़ी है, जबकि उस हद तक उत्पादन नहीं बढ़ा है। ऐसे में, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, म्यांमार और कुछ अफ्रीकी देशों से दालें आयात की जाती हैं। ऑस्ट्रेलिया भारत के लिए दालों का बड़ा निर्यातक है, लेकिन इस साल ऑस्ट्रेलिया में फसल अच्छी नहीं हुई है, इसलिए भी दालों की कीमतें बढ़ी हुई हैं।

लगातार दो साल मानसून खराब होने से घरेलू उत्पादन कम हुआ है, यह भी किल्लत की एक वजह है। सरकार की योजना यह भी है कि दालों का इतना बड़ा सुरक्षित भंडार रखा जाए, जिसका इस्तेमाल दाम बढ़ने की स्थिति में दामों को नियंत्रण में रखने के लिए किया जा सके। अगर सरकार लगभग दो-ढाई लाख टन दालों का भंडार रख सके, तो यह दामों को प्रभावित करने में कारगर हो सकता है। सरकार की योजना यह भी है कि म्यांमार से भी मोजांबिक की तरह का समझौता किया जाए।

यह संभावना है कि भारत में दालों की खपत अगले आठ-दस साल तक बढ़े और फिर वहीं स्थिर हो जाए। खपत बढ़ने की वजह गरीब परिवारों की आर्थिक स्थिति में सुधार है, जिससे उनके भोजन में प्रोटीन की मात्रा बढ़ने लगी है।

लगभग पांच साल बाद भारत की आबादी भी लगभग स्थिर हो जाएगी, जिसके कुछ समय बाद दालों की खपत भी बढ़ना बंद हो जाए। सरकार को इस हिसाब से सिर्फ दालों के लिए ही नहीं, सभी खाद्य पदार्थों के लिए योजना बनानी चाहिए, क्योंकि अपेक्षाकृत समृद्धि के साथ अनाज की खपत कम होती जाती है और अन्य खाद्य पदार्थों की जरूरत बढ़ती जाती है। ऐसे में, अगर 10-20 साल के लिए जरूरत और उत्पादन को संतुलित करने की योजना बनाई जाए, तो इससे किसानों को फायदा होगा और उपभोक्ताओं को भी कीमतों में भारी उतार-चढ़ाव का सामना नहीं करना होगा। मोजांबिक और म्यांमार की तरह अन्य उत्पादक देशों को भी इस योजना का अंग बनाया जा सकता है। एक समेकित दूरगामी खाद्यान्न और कृषि नीति बनाना वक्त की जरूरत है।

Date: 07-07-16

## ताकि हर बच्चे को मिले अच्छी शिक्षा

हरिवंश चतुर्वेदी, डायरेक्टर, बिमटेक

संख्या के आधार पर देखा जाए, तो दुनिया में भारत की स्कूली शिक्षा-व्यवस्था चीन के बाद दूसरे स्थान पर होगी। देश के 15 लाख स्कूलों में 26 करोड़ बच्चे पढ़ते हैं। इन 15 लाख स्कूलों में 11 लाख सरकारी और चार लाख प्राइवेट स्कूल हैं।

प्राइमरी स्कूलों में पढ़ाने वाले अध्यापकों की संख्या 85 लाख है, जिनमें से 47 लाख अध्यापक सरकारी स्कूलों में कार्यरत हैं। हर वर्ष सालाना परीक्षाओं में जब करोड़ों बच्चे परीक्षा देते हैं और उनके परीक्षाफल घोषित होते हैं, तो ऐसे तथ्य उभरकर आते हैं, जो बताते हैं कि हमारी स्कूली शिक्षा संख्यात्मक रूप से कितनी भी आगे बढ़ रही हो, पर गुणात्मक रूप से उसमें सब कुछ ठीक नहीं चल रहा। हाल में बिहार की 12वीं की बोर्ड परीक्षा में जो कुछ हुआ, उससे वहां की स्कूली शिक्षा की हालत का जायजा लिया जा सकता है। इसी राज्य में जब प्राइमरी स्कूलों के तदर्थ शिक्षकों की नौकरी नियमित करने के लिए परीक्षा ली गई, तो शिक्षक भी बेशर्मी से नकल करते पाए गए। स्कूली शिक्षा की दुर्दशा सिर्फ बिहार तक सीमित नहीं है, कम या ज्यादा सब जगह यही हाल है।

पिछले महीने सुब्रमण्यम समिति ने जिस नई शिक्षा नीति का मसौदा पेश किया, उसमें स्कूली शिक्षा के ऐतिहासिक विकास, वर्तमान स्थिति और भविष्य की संभावनाओं पर काफी विस्तार से ब्योरे दिए गए हैं। अभी इस मसौदे के प्रस्तावों पर राज्य सरकारों की राय ली जा रही है, क्योंकि स्कूली शिक्षा पर

ज्यादातर नियंत्रण राज्य सरकारों का ही है। आजादी के बाद शिक्षा नीति दो बार 1968 और 1986/1992 में घोषित की गई थी। स्कूली शिक्षा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण कानून 2009 में संसद द्वारा पारित किया गया, जिसे शिक्षा का अधिकार अधिनियम के नाम से जाना जाता है।

इस कानून के तहत केंद्र और राज्य सरकारों को यह वैधानिक जिम्मेदारी दी गई कि छह से 14 वर्ष की आयु के हर बच्चे को प्रारंभिक शिक्षा औपचारिक रूप से किसी ऐसे स्कूल में दी जाए, जहां सभी न्यूनतम मानक पूरे होते हों। इसी कानून के तहत हर निजी स्कूल में 25 प्रतिशत सीटें आर्थिक रूप से विपन्न वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित की गई हैं। हालांकि ज्यादातर प्राइवेट स्कूलों में इसका पालन ठीक तरह से नहीं किया गया।

सुब्रमण्यम समिति द्वारा बनाई गई नई शिक्षा नीति से क्या देश की स्कूली शिक्षा की सारी समस्याएं कुछ ही समय में खत्म हो जाएंगी? इस बात पर बहस जरूरी है कि संविधान में छह से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों को अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा देने की गारंटी को देश अभी तक क्यों पूरा नहीं कर पाया? क्यों आज भी तीन करोड़ बच्चे प्रारंभिक शिक्षा से वंचित हैं? लाखों सरकारी और प्राइवेट स्कूलों में आज भी बुनियादी सुविधाएं, जैसे भवन, फर्नीचर, शिक्षक, शौचालय, किताबें उपलब्ध नहीं हैं। क्या नई शिक्षा नीति में इनके लिए समुचित वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था की गई है? क्या स्कूली शिक्षकों की भर्ती व प्रशिक्षण के बारे में कोई मौलिक विचार दिया गया है?

सुब्रमण्यम समिति का सबसे ज्यादा चर्चित सुझाव शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 में लागू किए गए आठवीं कक्षा तक किसी भी विद्यार्थी को फेल न करने के प्रावधान को बदलकर पांचवीं कक्षा तक सीमित करना है। समिति ने छठी से आठवीं कक्षा तक पढ़ाई में कमजोर बच्चों को सुधारात्मक कोचिंग देने और परीक्षा पास करने के दो अतिरिक्त अवसर देने का सुझाव दिया है। निजी स्कूलों में 25 प्रतिशत स्थान गरीब वर्ग के बच्चों के लिए आरक्षित करने के प्रावधान का सुब्रमण्यम समिति ने पुरजोर समर्थन किया है और उसे अल्पसंख्यक वर्ग के स्कूलों में भी लागू करने का सुझाव दिया है।

शिक्षा का अधिकार अधिनियम, 2009 में स्कूली शिक्षा की क्वालिटी सुधारने के वास्ते प्राइवेट स्कूलों के लिए भूमि, भवन, शिक्षक, फर्नीचर, विषयक जो न्यूनतम मानक लागू किए गए थे, उन मानकों को सरकारी स्कूलों पर भी सख्ती से लागू करने का सुझाव दिया है। साल 1968 की शिक्षा-नीति के अंतर्गत लागू किए गए त्रिभाषा फॉर्मूले के त्रुटिपूर्ण क्रियान्वयन पर भी सुब्रमण्यम कमेटी मुखर है। इसका कहना है कि पांचवीं तक शिक्षा बच्चों की मातृभाषा में दी जानी चाहिए और प्राथमिक स्तर पर दूसरी भाषा तथा माध्यमिक स्तर पर तीसरी भाषा के चुनाव का अधिकार राज्य सरकारों के ऊपर छोड़ दिया जाना चाहिए, यानी त्रिभाषा फॉर्मूले से कोई छेड़छाड़ नहीं की गई है।



सुब्रमण्यम समिति ने 10वीं की परीक्षा में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन का सुझाव दिया है। चूंकि 10वीं की परीक्षा में फेल होने वाले ज्यादातर बच्चे गणित व विज्ञान विषयों से होते हैं, इसलिए इन दो विषयों में अब दो तरह से प्रश्न-पत्र बनाए जाएंगे- बुनियादी और उच्च स्तर। विद्यार्थियों का दोनों में से कोई भी प्रश्न-पत्र चुनने का विकल्प रहेगा। समिति को एक और अच्छा सुझाव मिड-डे-मील योजना को 10वीं तक के स्कूलों में विस्तारित करने का है। समिति का यह भी कहना है कि शिक्षकों को मिड-डे-मील के संचालन से मुक्त रखा जाए। समिति ने स्वयंसेवी और सामाजिक संस्थाओं से यह योजना संचालित करवाने को कहा है।

स्कूली शिक्षा की सबसे कमजोर कड़ी है शिक्षक, जिनमें से अधिकांश में इस पेशे से कोई आत्मीय लगाव नहीं पाया जाता है। उनके लिए यह सिर्फ रोजी-रोटी का साधन है। कमेटी ने यह माना है कि स्कूली शिक्षा की क्वालिटी सुधारने का एकमात्र उपाय यह है कि शिक्षकों की नियुक्ति, न्यूनतम योग्यता, प्रशिक्षण और पेशे के प्रति उनकी प्रतिबद्धता में गुणात्मक सुधार करना। मौजूदा शिक्षकों को पांच वर्ष में एक बार प्रशिक्षण देने का सुझाव दिया गया है और भविष्य में नए शिक्षकों की भर्ती के लिए पांच वर्षीय एकीकृत बीए/बीएससी-बीएड कोर्स शुरू करने की सिफारिश भी की गई है, जो 10वीं और 12वीं के बाद शुरू होंगे। समिति ने स्कूली पाठ्यक्रम और पुस्तकों के लेखन में शिक्षक संघों की भागीदारी की भी सिफारिश की है।

भारत की स्कूली शिक्षा को आज जिस ऊर्जावान रूपांतरण, नेतृत्व क्षमता, कुशल प्रबंधन और विपुल संसाधनों की जरूरत है, उसकी स्पष्ट तस्वीर सुब्रमण्यम कमेटी की रिपोर्ट में नहीं दिखाई देती। साल 1991 के बाद उदारीकरण के दौर में केंद्र और राज्यों की अधिकांश सरकारें स्कूली शिक्षा में सुधार की बड़ी-बड़ी योजनाएं बनाती रहीं, पर उनके सफल क्रियान्वयन में वे पूरी तरह नाकामयाब रही हैं। इसका मूल कारण स्कूली शिक्षा के कार्याकल्प के प्रति राजनीतिक इच्छा शक्ति का नितांत अभाव होना है। हमारी स्कूली शिक्षा साफ तौर पर वर्ग-विभाजन और सामाजिक भेदभाव का शिकार है। देश में संपन्न वर्ग और शिक्षित मध्यवर्गीय परिवारों के बच्चों के लिए महंगे और आलीशान स्कूल हर शहर में उपलब्ध हैं।

वहीं दूसरी ओर, गरीब व पिछड़े वर्ग के बच्चे उन सरकारी या निजी स्कूलों में धकेल दिए जाते हैं, जहां दिखावटी तौर पर बुनियादी ढांचा तो खड़ा है, किंतु पढ़ाई-लिखाई सिर्फ नाम के लिए होती है। सुब्रमण्यम समिति की सिफारिशों में शिक्षा नीति को 21वीं सदी की जरूरतों के अनुरूप बनाने की बात कही गई है, पर उसमें केंद्र व राज्य सरकारों को देश के हर बच्चे को एक जैसी अच्छी क्वालिटी की शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार नहीं बनाया गया है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)





Date: 07-07-16

## By Jupiter!

### **Within a month of entering orbit, Juno will begin to lift the veil on the gas giant.**

After a voyage of five years, Nasa's Jupiter probe has slid into polar orbit with perfect accuracy. It is not the first spacefarer to show an interest in Jupiter — Galileo stayed with the planet from 1995 to 2003. But while Galileo sent a probe down to Jupiter's atmosphere, Juno will barnstorm the planet, braving magnetic and gravitational fields which could fry its instruments. But now, they should be able to see through the cloud-wrack which muffles Jupiter and, for the first time, look into the heart of a gas giant. The mission is aptly named — in Roman mythology, only Jupiter's wife Juno saw the god as he really was.

Juno is a triumph of Nasa's New Frontiers programme, which is focused on planetary science. It will swing into action in August, when it approaches closest to the cloud-tops, and will settle into a comfortable rhythm months later, when it enters a stable 14-day orbit, which will last until it drops into the atmosphere and burns up in February 2018. In this time, it will study the very phenomena which will finally slay it — the powerful magnetic and gravitational forces in play, and particularly the magnetosphere at the poles. But it will also attempt to gather data about the surface, which may have a rocky core, and the atmosphere, whose turbulence makes an Earthside hurricane look like a light breeze.

Juno has nine eyes and ears pointed at Jupiter. Will it shed light on Jupiter's most intriguing feature, which fascinates both scientists and schoolchildren — the Great Red Spot, an anticyclone twice the size of the Earth which is at least as old as the first telescope? Space exploration is the greatest adventure of our era, but every discovery it makes does tend to take the edge off the universe's myths and mysteries.

---

# THE ECONOMIC TIMES

Date: 08-07-16

## How to rein in soaring pulse prices

India has a peculiar problem with pulses. It is in demand from lots of Indians who seek to raise their protein intake, a corollary of rising incomes in a country with lots of poor people, but cannot afford meat or avoid it for cultural reasons. The consumption of pulses in the country is over 22 million tonnes and rising. Output never crosses 19 million tonnes, the balance is met from imports. No other country consumes pulses on India's scale. Exporting countries have to produce to satisfy Indian demand. Any dip in output or imports results in inflation. This has to be tackled.

Yields are low, because pulse crops are grown in rain-fed areas and little research has gone into producing high-yield varieties. The government does announce minimum support prices (MSP) but these are both inadequate and redundant because of failure to back them up with procurement on the scale required. Importing pulses is tricky because of irrational stock limits. Forward markets have been banned, deleting vital price information.

On top of this, there has been a tendency, of late, for the retail price to stay inflexibly high, even when the wholesale price has come down after a spike. The government has to take short-term and long-term remedial steps. Replace stocking limits with a transparent system of stock reporting. Reintroduce forward markets in pulses. Encourage substitution of scarce varieties, like tur, with cheaper imported alternatives like yellow peas. Initiate a challenge open to universities and plant research companies to produce highyield varieties of pulses. Institute an extensive market intelligence scheme and make good, via direct payout to the farmer, the difference between the MSP and the price trade is willing to bear. The point is to summon the will to act.



Date: 08-07-16

## Modi in Africa :

## **India must walk the talk in its outreach to the continent**

Prime Minister Narendra Modi's ongoing four-nation Africa tour to Mozambique, South Africa, Tanzania and Kenya marks a continuation of India's outreach to the continent. Following the India-Africa Forum Summit in New Delhi in October last year that saw more than 50 African countries participate, the pace of two-way engagements has picked up. Modi's visit was preceded by President Pranab Mukherjee and Vice-President Hamid Ansari undertaking separate tours of African nations. All of this highlights a new sense of urgency on New Delhi's part to boost its Africa connect.

This in turn is driven by the insight that Africa should no longer be viewed as a basket case. The continent is among the fastest growing regions of the world. Consider that the Credit Suisse Global Wealth Report 2015 found that since 2000 the rate of growth of millionaires in Africa was faster than the global average by a factor of four. Even more critically the report highlighted that the wealth of those above the lower middle-class threshold in Africa had grown by 140% compared to a global average of 113%. This suggests a growing African middle class hungering for goods and services.

Against this backdrop, it's underwhelming that India's trade with Africa stands at just \$72 billion when China-Africa trade has already surpassed \$200 billion. True, India and China have very different strengths and approaches. China's Africa push is powered by state-owned enterprises while India's outreach is driven by private sector companies. India has the advantage of a sizeable diaspora in Africa which Modi will seek to tap during his tour to serve as a bridge between the two sides. In fact, a people-centric approach focussed on services will put India-Africa ties on a firmer footing.

Towards this end, India's Exim Bank is looking to disburse close to Rs 10,000 crore in Africa over the next three years with an eye on services export. This will provide a fillip to sectors such as healthcare, education and IT – areas which are seen as India's strengths. Meanwhile, India needs Africa's natural resources to power its next phase of industrial growth. But African nations have long complained of the Indian side failing to walk the talk. If the two are to synergise their efforts to combat common challenges such as poverty, they must go beyond the rhetoric and start delivering.

---

**Date: 08-07-16**

## **Upholding free speech:**

### **Madras high court struck a blow for freedom by defending beleaguered writer Perumal Murugan**

Freedom of speech is threatened when identity-based groups appoint themselves as community guardians and arrogate to themselves the right to decide how their group can be portrayed in print or film. In a judgment this week, the Madras high

court struck a blow for imperilled freedom of speech when it defended a book of beleaguered Tamil author Perumal Murugan, who stopped writing following intimidation by caste organisations.

Murugan's acclaimed Tamil novel Madhorubagan caught the attention of some caste-based groups a few years after its publication. Subsequently, the author was hounded as "sentiments" were offended. The upshot was that he not only announced that he would stop writing but also asked his publishers to withdraw all his work. It is this situation that the court judgment reversed by taking a stand in favour of democratic rights. The judgment does well in pointing out the fallacy in a line of reasoning that has become all too common in India. An identity-based group claims its sentiments have been hurt and threatens violence; the state then steps in and in the interests of "peace" bans the work of art or advises its author to withdraw it. In doing so, however, the state legitimises violence and fails in its first duty: to assure the security of its citizens.

One aspect of the judgment needs consideration. Recommending guidelines to help authorities to deal with a similar situation, the judgment said an expert body could look into the work. This is a minefield as assessment of a work of art is subjective. As the judgment itself says "art is often provocative and is not meant for everyone." It's best to follow the advice another part of the judgment proffers: "If you do not like a book, simply close it. The answer is not its ban."

---

**Date: 08-07-16**

## **'Accountability Bill is RTI Part Two ... people are frustrated with basic govt systems ... officials must heed citizens – not bosses'**

A new movement demanding an Accountability Bill has emerged from Rajasthan, where activist Nikhil Dey of the Mazdoor Kisan Shakti Sangathan, along with Suchna Evam Rozgar Abhiyan, is on a 'Jawab Do' campaign. Dey spoke

with Anindo Dey about ‘good governance’ discourse overlooking accountability, a national movement for implementing citizens’ rights – and ‘RTI Part Two’:

You’ve been on a ‘Jawab Do’ dharna for weeks – what is its purpose?

The dharna follows a 100-day accountability yatra across Rajasthan, demanding a strong people-centric accountability law. During the yatra, more than 10,000 grievances were recorded and uploaded on the government portal for redress – they illustrate the deep distress and frustration of ordinary people with the failure of government to provide even the most basic services and entitlements.

Subsequently, the nature of disposal highlighted weaknesses in existing redressal mechanisms. The dharna sought to move beyond the rhetoric of transparency, accountability and good governance – to create a practical framework of accountability to the people.

What issues are highlighted here?

Public hearings were held to petition the government on some most serious shortcomings in the delivery of entitlements in various sectors of development.

It’s a struggle to have even the most basic guarantees implemented – for instance, more than 70,000 sanctioned teacher posts lie vacant in government schools. Unregulated mining has destroyed a local ecosystem and is afflicting thousands with terminal illnesses such as silicosis. Also, 10 lakh pensions have been arbitrarily stopped, leaving vulnerable elderly people without the little financial support they had. In the name of better efficiency and inclusion, biometric machines have caused havoc with more than 50% beneficiaries unable to authenticate themselves.

Poignant testimonies from marginalised communities detail their inhuman living conditions – and their exclusion from governance. In the most severe drought conditions, people have to agitate to implement Supreme Court orders.

It's time we gave space to informed debate – and made our public officials answerable for every act of omission and commission.

What are the main features of this Accountability Bill?

The Accountability Bill seeks to build on the enormous progress made by people in enforcing transparency under the Right to Information, across India. While information opened the doors to citizens' participation in governance, these platforms need institutional and legal support.

This bill creates a mechanism for the redressal of grievances by enumerating people's rights through citizen's charters – while holding government officials accountable for the violation of their job charts.

It ensures people participate in making law and policy through a pre-legislative consultative process. Platforms like social audit and the right to hearing are used to ensure citizen-based measures for redress. Information and Facilitation centres are designed to help people ensure accountability. Independent appellate mechanisms provide a comprehensive oversight framework. Independent authorities can fix penalties on officials and provide compensation to citizens. A Janta Information System (JIS) would ensure proactive disclosure of information about expenditure and governance – at all levels.

How has the government reacted to this demand for an accountability law?

Well, the government of Rajasthan promised to pass a good governance law two years ago – but it has been put into cold storage.

They promised to initiate discussions on the Accountability Bill we submitted – but there is no real sign of enthusiasm.

Nevertheless, government officials at the highest levels met representatives and held discussions.

Is the campaign for an accountability law restricted to Rajasthan?

This campaign will be fought both at a state and national level – the law addresses a framework of development and governance that's common across the country.

The NCPRI has been advocating a strong grievance redress legislation. There are also several campaigns for accountability in different states.

Their synergetic coming together will make a robust legal formulation for accountability.

Isn't this just another law to add to a long list? How can we be sure this will be implemented?

The RTI has shown us that when the people own a process, they drive its implementation – with all its shortcomings, the RTI is used by almost eight million people a year across society.

A large number are determined civic activists who use RTI to extract answers out of a very opaque and closed system.

This law is an RTI Part Two.

People found that the RTI alone cannot ensure accountability. In many ways, like the RTI did, this bill simply turns the accountability of public officials from their seniors towards the people.

---